अभिशाप

पुधुवई रा रजनी

चित्रांकन सारदा नटराजन

पुधुवई रा रजनी

पुधुवई तमिल भाषा के उभरते हुये युवा लेखक हैं। अर्थशास्त्र के स्नातक हैं तथा वेलौर के एक आलीशान होटल में कार्यरत हैं।

इनकी पुस्तक ''थीवुगालिन संधिपु'' 1994 में प्रकाशित हुई थी। इनकी कहानियों की पृष्ठभूमि गरीबी पर आधारित होती है, जो हमारे समाज का अनिवार्य अंग बन चुकी है। अपनी रचनाओं में ये हास्य विनोद का अक्सर प्रयोग करते हैं, जो हमारे व्यवहार में इन दिनों कम ही नज़र आता है।

इस कहानी की प्रेरणा इन्हें इस बात से मिली की मनुष्य को हम कष्ट पहुँचायें तो वो हमें दुखी होकर श्राप दे देता है, जिसे 'हाय' भी कहते हैं। पर क्या पीड़ा से त्रस्त मानव ही श्राप देने का अधिकारी है या फिर ईश्वर ने निरीह जीव-जंतुओं जैसे तितली, गिरगिट आदि को भी उतना ही संवेदनशील बनाया है। कहानी पढ़ कर स्वयं निर्णय करें।

वो नन्हा सा शैतान, हाथ में नारियल की रस्सी से बंधी गिरगिट लिये, चला आ रहा था । उसके चेहरे पर, अपने कैदी को बांधे ला रहे, विजयी योद्धा सी चमक थी । मैंने गिरगिट को देखा, वो रस्सी से पुराने घड़ियाल के घंटे की तरह झूल रही थी । आँखों पर सफेद परत थी । उसके हरे, पीले और कथ्थई रंग की धारियों वाले शरीर में अचानक सिहरन हुई, फिर वह शांत हो गई ।

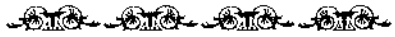

"अप्पा ... देखो ... ! मेरा बेटा उत्साह पूर्वक उछलते हुऐ चिल्लाया ।

"तुम्हें कहना चाहिये अप्पा, देखिये ..." हमेशा की तरह वत्सला उसे आदर पूर्वक बात करना सिखा रही थी । आप डाँटते क्यों नहीं इसे ? पर मैं उसे क्या डाँटता, उसकी उम्र में तो मैं रस्सी पर, तीन-तीन गिरगिट बाँधे, भागता फिरता था ।

"इसे कहाँ से पकड़ा बेटा ?" मैंने उसकी पीठ पर प्यार से हाथ फेरते हुये पूछा ।

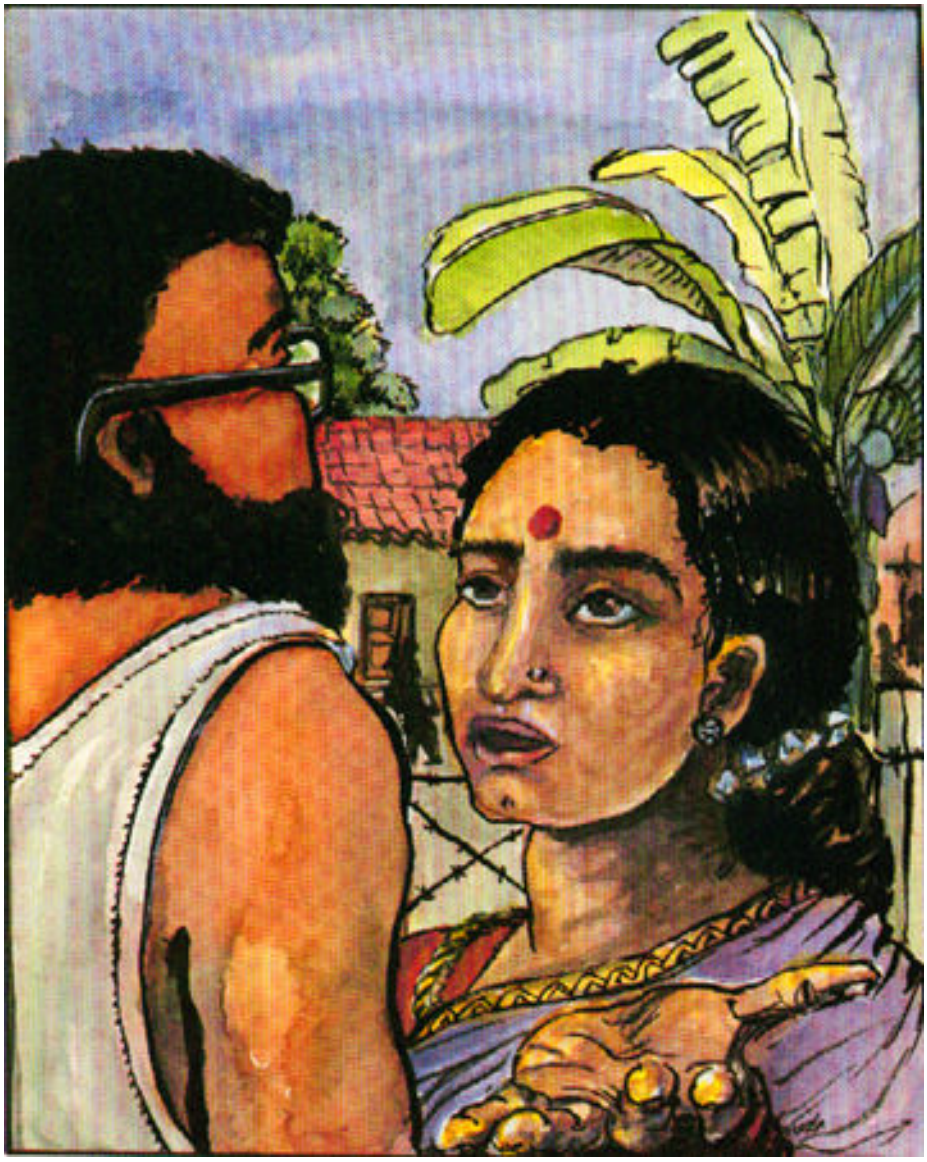

"मैं मंदिर के पास से आ रहा था ...", उसने सारा किस्सा, एक सांस में कह डाला। उसने रस्सी को हिलाना बंद कर दिया और गिरगिट आज़ाद होने के लिये कूदने लगी ।

पड़ोस की बूढ़ी अम्मा बोली "फिर पकड़ लाया ? इस को तल कर, नमक मिर्च लगा कर खा ले ।" और नन्हें ने जवाब में उन्हें तुरंत मुँह चिढ़ा दिया।

"हुँअअ ... फिर ?" मैंने उसे फिर उकसाया ।

"हाँ, बस यही तो रह गया है सबसे जरूरी काम !" वत्सला बोली । "पोंगल सर पर आ गया है, याद है मैंने अपने भतीजे के लिये आधे तोले की कुछ चीज़ बनाने के लिये कहा था ..."

उसकी बातों से लगा, जैसे नन्हें और मेरी बातों के चटखारे पर पानी फेर दिया गया हो ... काश! मैं गिरगिट होता तो शांतिपूर्वक इसी रस्सी में लटका पड़ा होता ।

मैंने वत्सला को देखा "अब मैं रूपये कहाँ से लाऊँ, गणेश का पहले ही 400 रू. का कर्ज़ा है, तेरह सौ विक्टर ..."

"अइयो, हमें कुछ तो करना होगा, रिश्ते थोड़े ही बिगाड़ सकते हैं, लोगों ने बातें बनानी शुरू कर दीं तो इज्ज़त, मिट्टी में मिल जायेगी। उसके स्वर में आक्रोश और भय दोनों ही साफ नज़र आ रहे थे ।

"अप्पा, मैं गिरगिट का क्या करूँ?"

कोई पकड़ी हुई गिरगिट का कर भी क्या सकता है।

"इसे छोड़ दो," मैंने उत्तर दिया ।

उसने गिरगिट को धीरे से ज़मीन पर उतारा, उसके शरीर में हलचल हुई और उसने धीरे से आँखें खोल दीं । जमीन देखते ही वह आगे को कूद पड़ी । पर उसे अचानक रस्सी ने रोक दिया । पूँछ फटकारते हुए, उसने अपनी आँखे चारों ओर घुमाईं । नन्हें ने उसकी रस्सी खोलनी चाही तो गिरगिट ने सिर ऊपर उठा दिया । नन्हें ने झट से हाथ खींच लिया।

मैंने उठकर रस्सी की गाँठ खोल दी। उसे शायद यकीन नहीं हुआ की वह स्वतंत्र हो चुकी है । कुछ क्षण वो स्तब्ध खड़ी रही फिर तेजी से पिलइयार मंदिर के काले चबूतरे पर चढ़ी औरे पीछे झाड़ियों में गायब हो गई।

नन्हें ने खुशी के मारे उछलते हुये ताली बजा दी। बचपन भी कितना सुखद होता है, चिंता मुक्त, समस्या रहित । परन्तु केवल कुछ ही समय के लिये ।

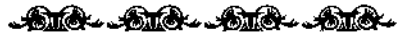

उन दिनों हमारे यहाँ न तो पक्की सड़कें थी न ही पक्की नालियाँ । लाल मिट्टी के कच्चे रास्तों के दोनों ओर टेढ़ी-मेढ़ी कच्ची नालियाँ थीं । नालियों के पास ही थोपू थाथा का बड़ा-सा बाग था । जीवन से सराबोर।

केले के पेड़ स्वादिष्ट फलों से भरे थे । सुपारी की बेलें, उनसे लिपटी रहती थीं। लंबे अरंडी के वृक्ष, हवा में लहराते थे । हरी-भरी शाखाओं पर, सूखे-सूखे फल इतराते थे । थोपू थाथा ने कटनमनी की झाड़ियाँ और कांटेदार पौधे भी उगा रखे थे ।

हमारा शिकार सुबह शुरू हो जाता था । थाँबू, लंगड़ा सेलवम, ज़ाकिर और मैं । थाँबू और मैं नारियल की रस्सी लिये रहते थे । ज़ाकिर और सेलवम, गुलेल । गिरगिट के शिकार में सेलवम का कोई मुकाबला नहीं कर सकता था । वह लड़खड़ाता उनके पीछे भागता था।

उसके दादा की टाँगें भी उसकी तरह थीं, एक बड़ी, एक छोटी। भागने पर छोटी टाँग, जमीन पर घिसटती रहती थी । उन्हें सेलवम का गिरगिट पकड़ना, फूटी आँख न सुहाता था । वे लंगड़ाते हुये उसके पीछे भागते और वो लंगड़ाता हुआ आगे, आगे । जब भी सेलवम पकडा जाता, तो उसकी कस के धुनाई होती थी ।

गिरगिटें झाड़ियों में पड़ी होती थीं, लगभग ओझल। न जाने कितनी तरह की होती थीं ये गिरगिट ।

एक पतली सी होती थी, शरीर कुछ लाल रंगत लिये, एक पौधे से दूसरे पर कूदती रहती थी । हमने थाँबू के कहने पर इनका नाम रखा था - वरुट ।

एक थी एकदम काली, जिसकी आँखों के पास कुछ सफ़ेद धब्बे होते थे । इसे कहते थे चितकबरी, सेलवम को कहीं दिखाई पड़ जायें तो इनकी ख़ैर नहीं !

बूढ़ी गिरगिट सबसे अलग होती थीं । फूले करेले जैसा शरीर । बड़े सिर के कारण डरावनी लगती थीं। इनको पकड़ना बहुत आसान होता था ।

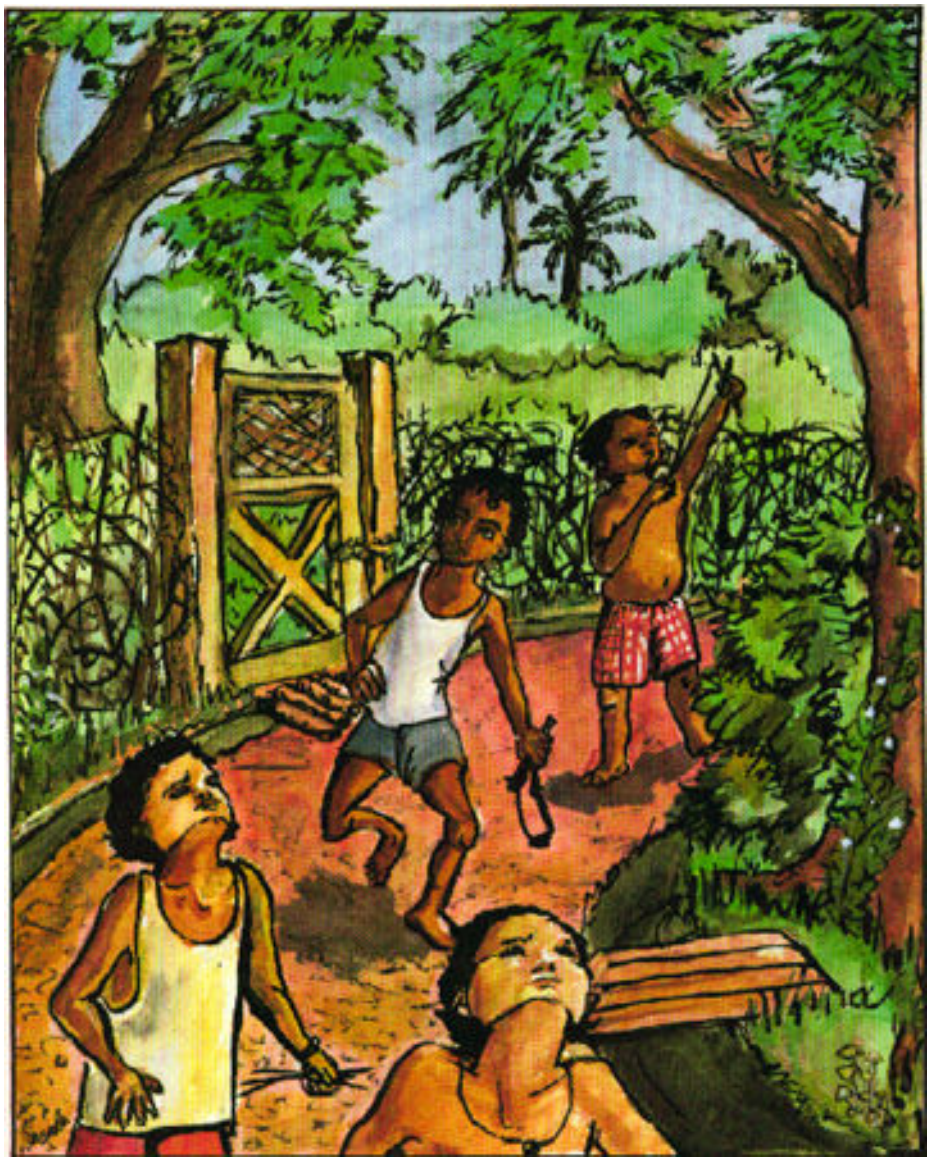

एक होती थी राम गिरगिट -- मोटी-ताज़ी, बहुत फुर्तीली वो हमारी सबसे बड़ी दुश्मन थी ।

उसने भगवान राम का भी तो अपमान किया था । कहते हैं, राम जब वनवास में थे तो उन्हें प्यास लगी उन्होंने झाड़ी पर बैठी गिरगिट से पानी माँगा । पानी देना तो दूर, उस धूर्त ने उन पर मूत्र त्याग दिया । अपमान से तिलमिलाते भगवान राम ने उसे श्राप दे डाला, जब भी दिखाई दोगी, मार खाओगी ।

मगर एक गिलहरी ने नारियल का पानी ला कर उनकी प्यास बुझाई । राम ने प्यार से गिलहरी की पीठ पर हाथ फेरा, जहाँ आज भी तीन काली धारियाँ दिखाई देती हैं ।

गिरगिट के अलावा हम हरी, लाल, पीली मधुमक्खियाँ भी पकड़ा करते थे और माचिस की डिबिया में बंद कर दिया करते थे । वे कटनमनी की झाड़ियों पर ही बैठी मिलती थीं । हम हैलिकॉप्टर जैसी ड्रेगन फ्लाई भी पकड़े बिना नहीं छोड़ते थे । हम उनके बंद होकर बार-बार खुलते पंखों से बहुत प्रभावित होते थे।

तो ... अब हम क्या करें ?" वत्सला ने मेरी तंद्रा भंग की ।

"हुँअअ...," मैं सोचने लगा । शादी के बाद तो बस सोचने का ही काम रह गया है । सोचने में कुछ बुराई नहीं । पर कोई अगर कुछ न करे केवल...

अपने साले के बेटे को, कुछ तो भेंट करना ही होगा। ऐसा नहीं कि मैं कुछ देना नहीं चाहता था । पर जब मैं अकेला था अम्मा को खर्चा देने के बाद भी दो सौ रूपये बचा लेता था ।

अब पत्नी, परिवार, रिश्तेदारों के बीच मेरे सिर पर हर महीने 300 रू. तक का कर्ज़ चढ़ जाता था । फिर कई अनदेखे खर्चे भी हो जाते थे । पर अगर भेंट नहीं दी तो वे लोग उम्र भर वत्सला से उसका बदला निकालते रहेंगे । उसका डरना स्वाभाविक ही था।

अप्पा ... मेरे लिये एक पानी वाली घड़ी ला दो ? नन्हें ने फ़िर मेरी सोच पर अंकुश लगा दिया ।

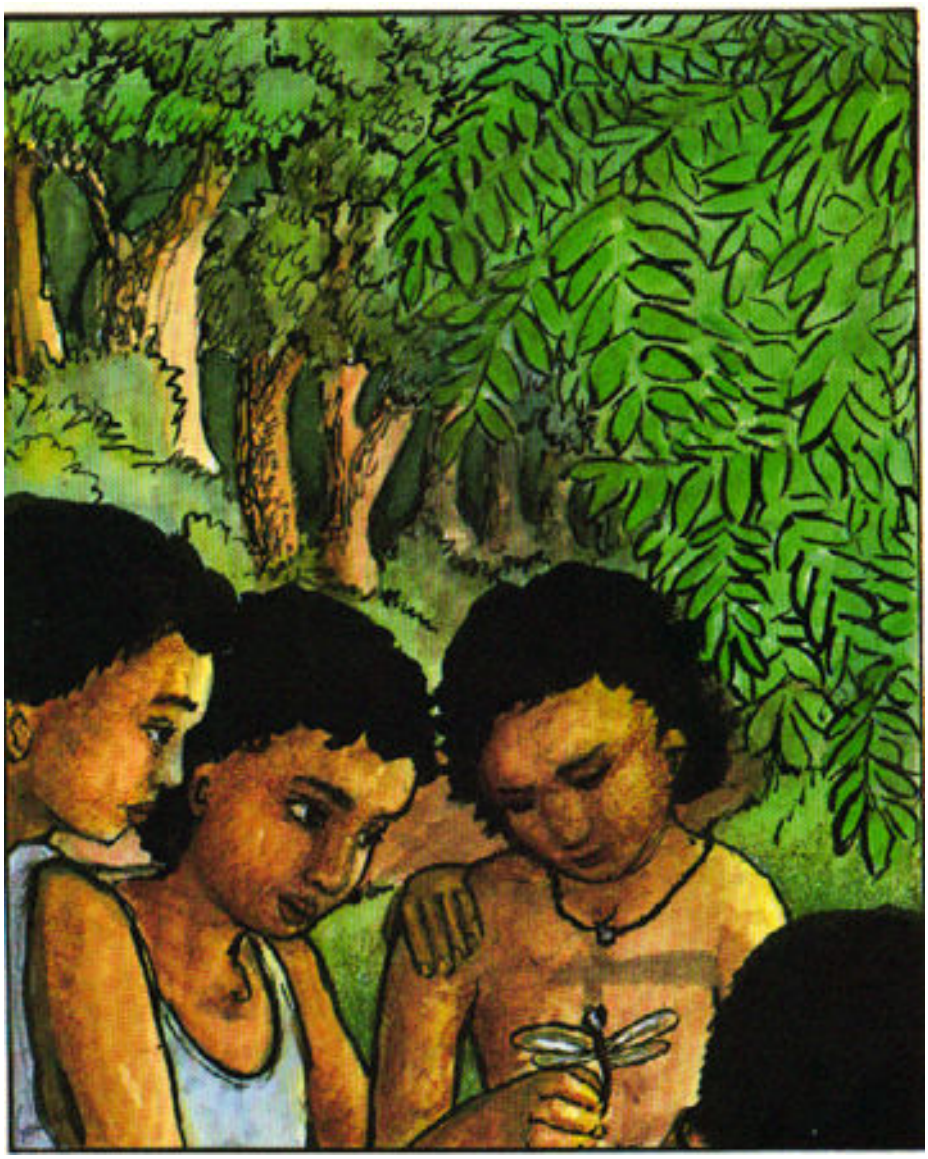

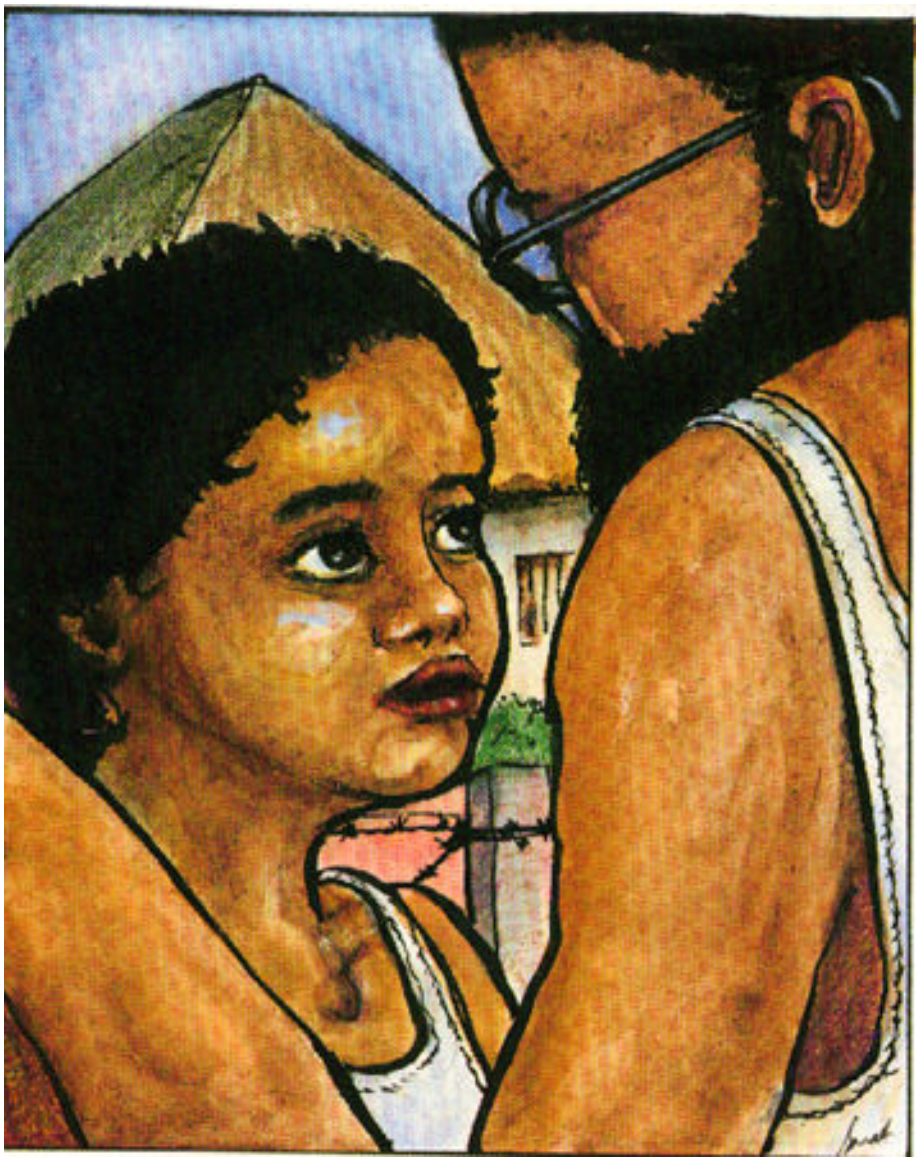

"क्या ?"

"पानी वाली घड़ी ... !"

उसने शायद मकान मालिक के पोते के पास देखी होगी। दो दिन पहले रात भर वो प्लास्टिक की ए.के. 47 बंदूक के लिये रोता रहा था जो उसने उसके पास देखी थी। ऐसे खिलौनों की उस आदमी के सामने क्या बिसात जो हर महीने दस घरों से 500 रू. महीने किराये की उगाही करता हो। हमसे तो कितनी बार मकान खाली करने को कह चुका है, उसकी पत्नी को तो इस बात में माहरथ हासिल है।

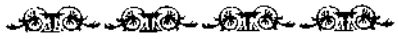

"ला दोगे न अप्पा," नन्हा ज़िद्द पर अड़ा हुआ था।

"हाँ, हाँ ला देंगे," मेरे कहते ही वत्सला उसे गोदी में उठाये भीतर ले गई।

उसे न ले जाती तो उसकी ज़िद्द बढ़ती जाती और मैं असहाय सा, अपने इकलौते बेटे की मामूली सी इच्छा पूरी न कर पाने के अपराध के बोझ तले, कुढ़ता रहता।

मैं ठोड़ी के नीचे हाथ रखे सोचने लगा ।

पड़ोस के घर से बर्तनों के मांजने की आवाज आ रही थी। मुमताज के आँगन में लगे सैहजन के पेड़ से एक पीला पत्ता नीचे तैरता हुआ उतर रहा था । धीमी-धीमी हवा बह रही थी ।

प्यैं प्यैं प्यैं ... ! किसी ने आवारा कुत्ते को पत्थर मार दिया था !

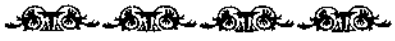

हम गिरगिट, हर रोज ही पकड़ा करते थे । मदुरै अय्या की रसोई की खिड़की तले, उगी झाड़ियों में घुस-घुस कर उन्हें ढूँढ़ा करते थे ।

खिड़की के पास ही एक छुईमुई की झाड़ी थी । हम उसे बार-बार छूकर उसके पत्तों का सहम कर सिमट जाना, देखा करते थे। केले के मुलायम पत्ते, तोड़-तोड़ कर खाया करते थे। पान के पत्तों को भी हम खूब चबाते थे । एक तो हमारे होठों में जलन हो जाती थी । तिस पर अपने-अपने घरवालों से मार भी खानी पड़ती थी ।

वो भी क्या दिन थे । कितनी मीठी यादें अपने पीछे छोड़ गये । न जाने कितनी गिरगिट हमारे हाथों स्वर्ग को प्राप्त हुई । न जाने कितनी मक्खियों को हमने माचिस की डिब्बियों में बंद किया । ... तितलियाँ ! सब याद आ रहा था । क्या वो पाप था ? ... क्या हमने पाप किया था ऐसा संभव था ?

मुझे शेखर से कर्ज़ा माँगना होगा, मैंने फैसला किया। आने वाले त्यौहार और भेंट का खर्च निबट जायेगा । कर्ज़ किस प्रकार लौटाऊँगा, मुझे बिल्कुल पता नहीं था।

कुछ दूरी से मैंने अपने नन्हें बेटे को आता देखा। उसके सीधे हाथ में एक तितली थी और उल्टे हाथ में उसके उखाड़े हुए सुंदर पंख ।

"अप्पा!" कहकर वो दौड़ता हुआ मुझे दिखाने आ रहा था ।

जीवन में पहली बार मैंने स्वयं को, उसे सज़ा देने के लिये तैयार कर लिया ।